शुद्ध पेय जल और प्रदूषण की समस्या

अंकुश्री

पूरे दिन हवा के अतिरिक्त आदमी यदि सबसे अधिक किसी चीज का उपयोग करता है तो वह है जल। शुद्ध पेयजल से मनुष्य स्वस्थ तो रहता ही है, इससे सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक सक्रियता भी बरकरार रहती है। स्वस्थ व्यक्ति हर क्षेत्र में अधिक कारगर हो सकता है। स्वस्थ व्यक्ति से उत्पादन–बढ़ोत्तरी में सही और पूरा सहयोग मिलता है। ठीक इसके विपरीत अशुद्ध जल से व्यक्ति बीमार रहने लगता है और इससे उसकी कार्यक्षमता कम हो जाती है। किसी परिवार में अस्वस्थ व्यक्ति के कारण सारी व्यवस्था गड़बड़ा जाती है। आर्थिक क्षीणता तो आ ही जाती है, परिवार का विकास बाधित हो जाता है। प्रदूषणमुक्त पेय जल की उपलब्धता हमारे सामने प्रश्नचिह्न की तरह खड़ी है, इस प्रश्न का उत्तर आसान नहीं है।

जिस तरह वायु हमारे जीवन के लिये आवश्यक है, उसी तरह जल भी जीवन के अस्तित्व के लिये अति महत्वपूर्ण है। लेकिन आज वायु और जल दोनों बुरी तरह प्रदूषित हो चुके हैं। बदले हुए मौसम जैसे बाढ़ और सुखाड़ का हमारे पेय जल पर असर पड़ता है। पीने के पानी में विषैले रसायन जैसे आर्सेनिक, फ्लोराइड, सीसा, पेस्टिसाइड्स आदि घुले हो सकते हैं। जल में जंग और रंग भी मिला हो सकता है। प्रदूषणमुक्त पेय जल की उपलब्धता हमारे सामने प्रश्नचिह्न की तरह खड़ी है, इस प्रश्न का उत्तर आसान नहीं है।

पेय जल हमें तीन स्रोतों से उपलब्ध होता है-भूमिगत जल से, रुके हुए जल से और बहते हुए जल से। पेय जल के मुख्य स्रोत नदी, तालाब और कुएं हैं। नलकूपों से भी पेय जल प्राप्त होता है। शहरों में पाइप लाइनों से जलापूर्ति की जाती है।

भूमिगत जल-स्रोत के लिये कुआं एक सर्वव्यापी साधन है। कुओं में सिर्फ भूमिगत जल का ही उपयोग होता है। इसलिये इसे शुद्ध जल के रूप में मान्यता प्राप्त है। किन्तु बरसात के दिनों में बारिश का जल ऊपर से आकर कुएं के जल को अशुद्ध कर देता है। इसलिये कुएं का घेरान भूमि तल से ऊपर रखना बहुत जरूरी है। इससे कुआं सुरक्षित भी हो जाता है। बिना घेरान के कुएं में बाहर से जानवरों आदि के गिरने की संभावना बनी रहती है। कई बार बकरी, गाय या अन्य पशु चरते-चरते बिना घेरान के कुएं में गिर जाते हैं। तब बड़ी विकट समस्या उत्पन्न हो जाती है। पशुओं को गिरते हुए तुरंत देख लेने पर तो उसे निकाल लिया जाता है। यदि गिरते समय उसे नहीं देखा गया तो कुंए का उपयोग करने के समय पता चल पाता है कि उसमें जानवर गिरा हुआ है। देर होने पर जानवर मर जाता है और कुएं का जल अशुद्ध हो जाता है। ऐसे में कुएं का सारा जल बाहर निकाल कर उसे साफ करने की नौबत आ जाती है और नया जल अंदर से रिस-रिस कर कुएं में जमा होता है। इसमें लोगों को काफी परेशानी हो जाती है। इसलिये कुआं गांव-बस्ती के बीच हो या खेतों के बीच,

भूमिगत जल सोत्र के लिए कुएं हैं एक पारम्परिक साधन।

उसका घेरान बहुत आवश्यक है।

भूमिगत जल के उपयोग का दूसरा माध्यम है तालाब। गांवों में प्रायः पहले से ही तालाब पाये जाते हैं। नये-नये तालाबों की खुदाई भी होती रहती है। तालाब नया हो या पुराना, उसकी सफाई बहुत आवश्यक है। तालाबों के किनारे प्रायः पेड़ लगाने की परम्परा है। यह अच्छी परम्परा है। लेकिन तालाब किनारे पेड़ लगाते समय पूरब या पश्चिम दिशा खुली छोड़ देनी चाहिये; ताकि तालाब के पानी को धूप मिल सके। तालाब का घेरान करना भी आवश्यक है। घेरान से बाहरी कचरा हवा के साथ उड़ कर उसके अंदर नहीं आता है और अचानक दौड़ कर आने वाले जानवरों या आदमी के लिये भी वह खतरनाक साबित होने से बच जाता है। कुएं या तालाब के जल के शुद्धीकरण के लिये उसमें मछली पालना आवश्यक है। मछलियां जल के दृश्य-अदृश्य कीड़ों को खा कर जल को कीट मुक्त कर देती हैं।

नलकूप भूमिगत जल के उपयोग के लिये सर्वाधिक सुलभ और सामान्य साधन है। नलकूप का जल अत्यधिक सुरक्षित और शुद्ध होता है। इसमें एक बात ध्यान देने की है कि नलकूप के निकट में शौचालय की टंकी नहीं हो अथवा उसके निकट गंदा जल नहीं बहता हो। इसलिये जहां नलकूप हो, सेप्टिक टैंक उससे कम से कम 12 फीट दूर बनाया जाना चाहिये अगर नलकूप के आसपास गंदे जल की नाली बहती हो तो उसकी दिशा दूसरी ओर मोड़ देनी चाहिये, ताकि गंदा पानी रिस कर नलकूप के जल-स्रोत के पास नहीं जा पाये।

भूमिगत जल के उपयोग के लिये बोरिंग की भी व्यवस्था की जाती है। यह नलकूप की तरह ही है, लेकिन यंत्रचालित व्यवस्था है। इसमें जल का खींचने का काम हाथ से नहीं कर मोटर से किया जाता है। इसके माध्यम से कम समय में अधिक जल का निष्कासन हो जाता है। बोरिंग के आसपास भी शौचालय के सेप्टिक टैंक का निर्माण अथवा गंदे जल की नाली का बहाव नहीं होना चाहिये।

शहरों में जल-मिनारों (टंकियों) से पाइप लाइन द्वारा जलापूर्ति की व्यवस्था भी भूमिगत जल का ही उपयोग है। इसमें डीप बोरिंग द्वारा भूमिगत जल निष्कासित कर ऊपर जल-मिनार में जमा किया जाता है और पाइप लाइनों की सहायता से घर-घर में जलापूर्ति की जाती है। इस व्यवस्था के तहत भी पेय जल की शुद्धता बनी रहे इसके लिये समय-समय पर जल-मिनारों की सफाई आवश्यक है।

पहाड़ी क्षेत्रों में बांधे गये जल अर्थात् डैम से प्राप्त जल की पाइप लाइनों द्वारा आपूर्ति की जाती है। डैम से जलापूर्ति में डैम की सफाई पर ध्यान देना बहुत जरूरी है। प्रायः डैम की विपरीत दिशा में, जहां से जल बह कर डैम में जमा होता है, गंदगी फैली होती है। बस्ती के आसपास के डैम के किनारे लोग शौच करने चले जाते हैं। उधर सन्नाटा रहने के कारण बस्ती वाले कूड़-कचरा भी फेंक देते हैं। गांव में मरे हुए जानवरों को भी वहीं लाकर फेंक दिया जाता है। इसलिये डैम के कैचमेंट एरिया और उसके आसपास की सफाई पर ध्यान देना बहुत जरूरी है।

नदी-नालों से भी पीने का जल लिया जाता है। नदी-नालों से लिया गया जल बहते हुए जल के उदाहरण हैं। मैदानी क्षेत्रों में नदी का पाट बड़ा होता है और वहां पानी की उपलब्धता भी प्रायः अधिक होती है। लेकिन पठारी क्षेत्र की नदियां संकीर्ण और छिछली होती हैं। बरसात के मौसम में तो उन नदियों में पानी की बहुलता रहती है, लेकिन अन्य दिनों वहां पानी नहीं के बराबर पाया जाता है। ऐसी बात नहीं है कि पठारी क्षेत्र की सारी नदियां संकीर्ण और छिछली ही होती हैं। ऐसी संकीर्ण और छिछली नदियां भी कहीं-कहीं काफी चौड़ी होकर बहती हैं। संकीर्ण और छिछली पहाड़ी नदियों का जल पीने लायक नहीं रहता है। हां, जहां यह चौड़ी होकर बहती है, वहां का जल पीने योग्य रहता है। पठारी क्षेत्रों में नाले अधिक पाये जाते हैं। ऐसे नालों का जल भी गांव वाले पीने के काम में

शहरों में जल-मिनारों (टंकियों) से पाइप लाइन द्वारा जलापूर्ति की व्यवस्था भी भूमिगत जल का ही उपयोग है। इसमें डीप बोरिंग द्वारा भूमिगत जल निष्कासित कर ऊपर जल-मिनार में जमा किया जाता है और पाइप लाइनों की सहायता से घर-घर में जलापूर्ति की जाती है। इस व्यवस्था के तहत भी पेय जल की शुद्धता बनी रहे इसके लिये समय-समय पर जल-मिनारों की सफाई आवश्यक है।

लाते हैं लेकिन इसके लिये वे एक तकनीक का उपयोग करते हैं बहते हुए नाले के पानी को छोटे-छोटे गड्ढों में जमा कर तब उसका उपयोग किया जाता है। नाले के बहते हुए जल को जिन छोटे गड्ढों में एकत्रित किया जाता है, उन्हें चुआं कहते हैं। यह कुआं से बहुत छोटा और बिना खर्च का तैयार हो जाता है। इसमें आसपास बिखरे चट्टान के टुकड़ों को जमा कर कम गहराई के छोटे कुएं का रूप दे दिया जाता है।

वर्ष 1977 में संयुक्त राष्ट्र जल सम्मेलन की अर्जेंटिना में हुई बैठक में लिये गये निर्णय के अनुसार 1981-90 को अंतरराष्ट्रीय जलापूर्ति एवं स्वच्छता दशक के रूप में मनाया गया था। इसका परिणाम प्रभावकारी अवश्य रहा। परंतु शुद्ध पेयजल की व्यवस्था की दिशा में हुआ प्रयास ऊंट के मुंह में जीरा ही साबित हुआ। तीन दशक बीत गये हैं, फिर भी हमारे देश के अनेक क्षेत्रों में पेयजल की व्यवस्था होना अभी बाकी है। देश के अनेक शहरों में भी गर्मियों में पीने के जल के लिये हाहाकार मच जाता है। बढ़ती हुए आबादी को अधिक जल की आवश्यकता है। लेकिन बढ़ती हुई आबादी के कारण तालाब और नदी-नालों का अतिक्रमण होने लगा है। इससे धरती के जल-धारक क्षेत्र कम होते जा रहे हैं। इसलिये यह आवश्यक है कि अधिक से अधिक तालाबों का निर्माण कराया जाये और बरसात में बहते हुए पानी को शोख्ताओं (सोक पिट्स) के जरिये भूमिगत कर दिया जाये। जल का उपयोग चाहे किसी भी स्रोत से किया जाये, बरसात में उसका भंडारण बहुत आवश्यक है। मकान की छत पर गिरने वाले बरसात के पानी को पाइप के माध्यम से भूमिगत कर देने से भूमिगत जल-स्रोत की स्थिति मजबूत हो जायेगी और गर्मियों में पेय जल की परेशानी से बचा जा सकता है।

प्रदूषणमुक्त पेयजल की उपलब्धता कई कारणों से एक कठिन कार्य है। हम ऊपर देख चुके हैं कि जल चाहे नदी-नालों का हो या भूमिगत अथवा रूका हुआ-वह प्रदूषित हो सकता है। प्रदूषणमुक्त पेयजल की उपलब्धता एक विकट समस्या बनी हुई है। इसके लिये आम आदमी में जागरूकता बहुत आवश्यक है। हर व्यक्ति का यह परम कर्तव्य है कि वह जल-स्रोतों के पास गंदगी नहीं फैलाये और दूसरे लोगों को भी ऐसा करने से मना करे। गंदगी फैलाने वाले को व्यक्तिगत रूप से रोक पाना संभव नहीं हो तो उन्हें सामूहिक रूप से मना किया जाये। खुले में शौच की तो किसी को अनुमति नहीं दी जानी चाहिये, चाहे इसके लिये कुछ देर के लिये किसी को बुरा ही क्यों न लगे। जल-स्रोतों से कुछ दूर का शौच भी बरसात के दिनों में बह कर जल में मिल जाता है। यह बहुत गंदी स्थिति है जो लोग समझाने पर भी खुले में शौच करते हैं, उनका गांव में सामूहिक बहिष्कार कर देना चाहिये। इससे उन्हें अपनी गलती का आभास होगा और वे गलती दुहराने से बाज आयेंगे। ऐसा करना उनकी मजबूरी हो जायेगी, क्योंकि वे भी हैं तो इसी समाज के आदमी। स्वच्छ दिखने वाला जल शुद्ध भी हो-यह आवश्यक नहीं है। अनेक जीवाणु-कीटाणु अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं। कुछ जीवाणु-कीटाणु इतने

नन्हे होते हैं कि हमें आंखों से दिखाई नहीं देते। सूक्ष्मग्राही यंत्रों से देखने पर जल की वास्तविकता पता चलती है कि स्वच्छ दिखने वाला जल वस्तुतः कितना प्रदूषित है। जल-स्रोतों के आसपास की स्थिति देख कर भी उसकी शुद्धता का अनुमान लगाया जा सकता है। अच्छे और उपयोगी जल की सामान्य पहचान उसके स्वच्छ होने के साथ स्वादिष्ट होना भी है। जल में आम तौर पर दो प्रकार की अशुद्धियां पायी जाती हैं। लेकिन जल की हर अशुद्धि हानिकारक नहीं होती। उसमें घुले हुए कई खनिज स्वास्थ्य के लिये लाभदायक भी होते हैं। जल को पीने योग्य बनाने के लिये जल उपचार केंद्रों में हानिकारक अशुद्धियों को ही दूर किया जाता है। पूर्ण रूप से दूर नहीं किये जा सकने वाली अशुद्धियों को इस हद तक कम कर दिया जाता है कि वे स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डाल सकें।

सिर्फ हानिकारक अशुद्धियों की मौजूदगी ही जल को पीने के अयोग्य नहीं बनाती, कुछ तत्वों-अवयवों की कमी से भी वह पीने योग्य नहीं रहता। जैसे फ्लोराइड की मात्रा जिस जल में प्रति लीटर एक मिलीग्राम से कम रहती है, उस जल को पीने से बच्चों के दांत में खोढर (कैविटी) होने की आशंका बढ़ जाती है। जल में आयोडीन के अभाव से घेंघा रोग हो जाता है। कैल्शियम, मैग्नीशियम आदि की भी थोड़ी मात्रा पीने योग्य जल में रहनी चाहिये।

लेकिन ठीक इसके विपरीत कुछ तत्व ऐसे हैं, जिनकी थोड़ी मात्रा भी जल को पीने योग्य नहीं रहने देती। इन तत्वों में प्रमुख हैं-आर्सेनिक, बेरियम, कैडमियम, साइनाइड्स, लेड, सैलिनियम, सिल्वर, कॉपर इत्यादि। इन तत्वों की हल्की मौजूदगी से जल विषैला हो जाता है। ऐसी विषैली अशुद्धियां क्षेत्र विशेष में पायी जाती हैं। वैसी जगहों में दूर से ही सही, मगर शुद्ध पानी लाकर पीना चाहिये।

जल में अनेक तरह के जीवाणु पाये जाते हैं। यह सुनने में आश्चर्य हो सकता है कि जल में पाये जाने वाले जीवाणुओं में से 90 प्रतिशत से अधिक जीवाणु हमारे लिये लाभकारी होते हैं। जल में कुछ ऐसे जीवाणु भी पाये जाते हैं, जो हानिकारक जीवाणुओं को अपना भोजन बना कर हमें लाभ पहुंचाते हैं। लेकिन कुछ जीवाणु हमारे स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होते हैं। हैजा, पीलिया जैसी बीमारियों को फैलाने में इन हानिकारक जीवाणुओं का काफी योगदान रहता है।

जल में दो प्रकार की अशुद्धियां पायी जाती हैं। एक, जो हमें खुली आंखों से दिखायी देती हैं। जैसे कूड़ा-करकट, उद्योगों से निकला रंगीन रसायन एवं अन्य उच्छीश्ट, राख, लाशें, अधजली लाशें, फूल-मालाएं, जूठा भोजन और मल-मूत्रादि। दूसरे प्रकार की अशुद्धियां वे हैं, जो सूक्ष्मदर्शी होती हैं और खुली आंखों से दिखायी नहीं देती। इनकी जानकारी रासायनिक विश्लेषणों से ही हो पाती है। सच पूछा जाये तो ये सूक्ष्मदर्शी या अदृश्य गंदगी ही स्वास्थ्य के लिये विशेष तौर पर हानिकारक होती हैं। स्वस्थ रहने के लिये इनसे बच कर रहना आवश्यक है।

नदियों या अन्य जलस्रोतों पर तरह-तरह के लोग आते हैं। वे जिस नदी का जल पीते हैं, उसी में नहाते हैं तथा कपड़ा और बर्तन भी धोते हैं। हद तो तब पार कर जाती है, जब मल-मूत्र का त्याग भी नदियों और तालाबों के किनारे किया जाता है। ये सारे मल-मूत्र बह कर बिना किसी उपचार के नदियों और तालाबों में चले जाते हैं। स्वाभाविक है कि ऐसे उत्सर्जनों से जलस्रोत प्रदूषित हो जाते हैं। संक्रमित मानव द्वारा प्रायः सौ प्रकार के वायरस उत्सर्जित किये जाते हैं। इनमें से अधिकतर वायरस जल को बिना गरम किए उपयोग में लाने से स्वस्थ व्यक्ति को भी संक्रमित कर डालते हैं।

नदी-तालाबों में कपड़ा साफ करने से जल में अपमार्जक (डिटरजेंट) घुल जाता है, जो मनुष्य के लिये कौन कहे, जानवरों के लिये भी घातक है। कृषि प्रधान क्षेत्र की नदियों के जल में खेत से बहकर आये उर्वरकों और कीटनाशकों की मात्रा रहती है, जिससे जल पीने योग्य नहीं रह पाता। खेतों में प्रयुक्त कीटनाशक वर्षा के जल के साथ बह कर नदियों-तालाबों में चला जाता है। पेय जल में ऐसे कीटनाशक रसायनों का पाया जाना स्वास्थ्य के लिये अति घातक है। भारतीय चिकित्सा विज्ञान अनुसंधान परिषद् के अध्ययनों के अनुसार भारतीयों की देह में डी.डी.टी. की काफी मात्रा मौजूद है, जो पेय जल के माध्यम से शरीर में पहुंचती है। इन कीटनाशक रसायनों और अपमार्जकों (डिटरजेंट्स) के दुष्प्रभाव को इसी बात से आंका जा सकता है कि ऐसे जल में रहने वाली मछलियां तक मर जाती हैं। विदित है कि मछलियों एवं अनेक अन्य जलीय प्राणियों का प्रदूषण-निवारक महत्व बहुत अधिक है। इन जल-प्राणियों द्वारा जल के अनेक प्रकार के कीटाणुओं और गंदगी का सफाया कर दिया जाता है। इसीलिये नदियों और तालाबों में शुद्ध पेय जल के लिये मछलियों का होना अत्यावश्यक माना गया है। पेड़ से गिरे पत्तों एवं अन्य वनस्पतियों को भी मछलियां चट कर जाती हैं।

उद्योगों का जल से गहरा संबंध है। प्रायः उद्योग बिना जल के नहीं चल सकते हैं। इसीलिये अधिकतर उद्योगों का निर्माण नदियों के किनारे किया जाता है। उद्योगों के कचरे को नदियों में बहा दिया जाता है। इससे उद्योगों का निकटवर्ती जल-स्रोत बुरी तरह प्रदूषित रहता है। यह दूसरी बात है कि अब बहुत सारे उद्योगों के उच्छीष्ट नदियों में सीधे नहीं बहाये जाते हैं। बहाने से पूर्व उच्छीष्टों को उपचारित किया जाता है। लेकिन उद्योगों के उच्छीष्टों के कारण नदियां कमोबेश प्रदूषित तो हो ही जाती हैं। इसका सीधा प्रभाव पेयजल पर पड़ता है। हुगली नदी के किनारे कपड़ा, पटसन, कागज, शराब, चमड़ा आदि के सैकड़ों कारखाने बने हुए हैं। कानपुर में गंगा के किनारे चमड़ा उद्योगों की भरमार है। यहां यह नहीं कहा जा रहा है कि सभी उद्योगों द्वारा नदियां प्रदूषित की जा रही हैं। मगर एक बात सर्वमान्य है कि उद्योगों से नदियों का जल प्रदूषित हुए बिना नहीं रहता। यह सीधे तौर पर पेयजल की समस्या से जुड़ा विषय है।

गंगा इतने प्रमुख नगरों से होकर गुजरती है कि प्रदूषण का भार ढोते-ढोते वह काफी थक जाती है। बड़े-बड़े उद्योगों या प्रतिष्ठानों के उच्छीष्ट पर लोगों की नज़र पड़ जाती है। फलतः उन्हें कुछ हद तक नियंत्रित कर दिया जाता है। मगर नदी किनारे बसी हुई बस्तियों के घरों से निकलने वाले उच्छीष्टों को कभी पूर्ण रूप से नियंत्रित नहीं किया जा सकता। गंगा का जल जितना अधिक पवित्र माना जाता था, अब उतना ही अधिक प्रदूषित माना जाने लगा है। कानपुर में चमड़ा, कपड़ा और दूसरे अन्य उद्योग स्थापित हैं। मोकामा (पटना) में शराब, जूट और जूता आदि के कारखाने हैं। गंगा-किनारे विभिन्न घाटों पर प्रतिदिन सैकड़ों लोगों का दाह-संस्कार किया जाता है। फलस्वरूप हजारों टन राख गंगा में बहायी जाती है। वाराणसी की गंगा में बहुत दूर-दराज से लोग आकर अस्थि-कलश बहाते हैं। इससे धार्मिक भावनाओं का भले संपोषण होता हो, लेकिन नदी में बुरी तरह प्रदूषण हो जाता है। कुल 2035 किलोमीटर लंबी गंगा का 480 किलोमीटर अर्थात् 23.5 प्रतिशत बुरी तरह प्रदूषित है।

यमुना की कुल लंबाई 1014

अदृश्य गंदगी स्वास्थ्य के लिए अधिक हानिकारक होती है।

किलोमीटर है। इसमें 482 किलोमीटर अर्थात् लगभग आधी यमुना प्रदूषित है। हुगली, गंगा, यमुना का प्रदूषण तो सिर्फ उदाहरण है। कृष्णा, कावेरी, साबरमती, नर्मदा, भीमा, ताप्ती, वैनगंगा, गोदावरी, स्वर्णरेखा, दामोदर, कोयल-कारो आदि नदियों का जल भी बुरी तरह प्रदूषित हो गया है। इन सारी नदियों का जल प्रायः सभी जगह पीने योग्य नहीं रह गया है। जबकि वास्तविकता तो यह है कि नदियों के किनारे ही हमारी सभ्यता पनपी है और आज भी वहां संस्कृति का विकास हो रहा है। अधिक से अधिक जनसंख्या इन नदियों के किनारे रहती है और ज़ाहिर है कि पीने के लिये इसी जल का उपयोग करती है।

प्रदूषण की मार झेलती यमुना नदी।

खनिजों से तरह-तरह के उद्योग संचालित होते हैं। बिना उद्योग के हम दुनिया की कल्पना ही नहीं कर सकते हैं। लेकिन यह एक प्रमाणिक सत्य है कि खनिकर्म के चलते भी पेयजल का प्रदूषण होता है। सिंहभूम के गांवों में लौह अयस्क एवं अन्य खदानों से बहे लाल जल के कारण शुद्ध पेय जल का इतना अधिक अभाव है कि बहुत लोगों को अशुद्ध जल से काम चलाना पड़ता है। इससे वे बीमार रहते हैं और उन्हें कमजोर जीवन जीने के लिये मजबूर रहना पड़ता है। यही हाल रोहतास के अमझौर स्थित एक केमिकल फैक्टरी के कारण वहां के लोगों का हुआ। पहाड़ियों को काट कर गंधक निकालने के बाद बचे कचरे ने जल के साथ बह-बह कर नीचे के दर्जनों गांवों को पीला कर दिया था। उसके कारण भूमिगत जल-स्रोत तक प्रदूषित हो गये थे। ऐसा जल लोग पी नहीं पाते और कृषि भी बुरी तरह प्रभावित होती है। ऐसी जगहों में चारों तरफ बीमारी और कमजोरी का साम्राज्य रहता है। कोयला खदान वाले इलाकों में पानी का रंग काला रहता है। चारों तरफ काला-काला पानी दिखायी देता है। उपचारित करने के बाद भी वहां के जल में कोयले का प्रभाव रह जाता है। अल्यूमिनियम के अयस्क बौक्साइट के खनन क्षेत्र में जल का रंग लाल हो जाता है। इसी तरह जहां भी खदान हैं, वहां का जल प्रदूषित हो जाता है और लोगों को पेय जल की समस्या झेलनी पड़ती है।

यह सुनने में बड़ा अजीब लगता है कि जल में रह कर भी प्यासे रहा जाये। मगर बात कुछ ऐसी ही है। धरती का दो-तिहाई भाग जल है, जिसका आयतन करीब 15000 लाख घन किलो लीटर है। किंतु इसका सिर्फ 2 प्रतिशत ही मीठा (मृदु) जल है। इस अल्प प्रतिशत मीठे जल का 240 लाख घन किलो लीटर जल ग्लेशियर के रूप में जमा हुआ है। बाकी जो मीठा जल है, वह जैसा कि ऊपर वर्णित है, प्रदूषण की मार झेल रहा है।

शुद्ध पेय जल की विभिन्न क्षेत्रों में कमी का एक प्रमुख कारण जल का पीने से इतर कार्यों में उपयोग कर लेना है। विभिन्न जटिल सिंचाई परियोजनाओं के माध्यम से बहुत बड़ी मात्रा में जल का उपयोग कर लिया जाता है। नदियों में जगह-जगह पर बांध बना कर बहते हुए जल को रोका जाता है। इस प्रकार जल की मात्रा कम रहने से उसकी अशुद्धता भी कम हो जाती है।

विभिन्न उद्योगों में अत्यधिक मात्रा में जल की खपत होती है। एक टन इस्पात उत्पादन के लिये 6 टन जल की, एक टन अल्युमीनियम उत्पादन के लिये 1500 टन जल की और एक टन रबर उत्पादन के लिये 2500 टन जल की आवश्यकता पड़ती है। इससे विभिन्न उद्योगों में जल की खपत का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। इन उद्योगों में जल का पुनः उपयोग (रि-साइक्लिंग) कर इसकी बर्बादी को रोका जा सकता है। मृदु जल का अभाव सीधे पेय जल से जुड़ी समस्या है। कृषि अथवा उद्योगों में अधिकतर मृदु जल का ही उपयोग होता है।

उद्योगों और शहरों से बहाये गये उच्छिष्टों तथा अन्य विभिन्न कारणों से नदियां तो बुरी तरह प्रदूषित होती ही हैं, इन प्रदूषित नदियों के कारण समुद्र के किनारे और अंदर भी प्रदूषण होता है। प्रदूषण चाहे जिस किसी तरह का हो, उसका असर घुमा-फिरा कर मानव जीवन पर ही पड़ता है, जो वर्तमान और भविष्य दोनों के लिये घातक है। इसलिये जल की उपादेयता को देखते हुए यह आवश्यक है कि इसका कम से कम उपयोग कर अधिक से अधिक काम पूरा कर लिया जाये।

आम तौर पर भूमिगत जल को शुद्ध माना जाता है। लेकिन हर जगह का भूमिगत जल शुद्ध नहीं होता। रोहतास के अमझोर स्थित गंधक खदान क्षेत्र के कूपों और नलकूपों का जल पीला हो गया था। उदयपुर के छह गांवों में भूमिगत जल 1989 तक इतना अधिक प्रदूषित हो चुका था कि उस जल का उपयोग पीने की कौन कहे, खेती के लिये भी नहीं किया जाता था। एक सिल्वर केमिकल फैक्टरी के कारण यह स्थिति उत्पन्न हुई थी। बाद में उस फैक्टरी को बंद करा दिया गया। जल प्रदूषण के ऐसे अनेक उदाहरण मिल जायेंगे।

लोगों के स्वास्थ्य के लिये अनेक संस्थाएं, सरकार और बहुत सारे लोग चिंतित हैं। पूरे दिन हवा के अतिरिक्त आदमी यदि सबसे अधिक किसी चीज का उपयोग करता है तो वह है जल। शुद्ध पेयजल से मनुष्य स्वस्थ तो रहता ही है, इससे सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक सक्रियता भी बरकरार रहती है। स्वस्थ व्यक्ति हर क्षेत्र में अधिक कारगर हो सकता है। स्वस्थ व्यक्ति से उत्पादन-बढ़ोत्तरी में सही और पूरा सहयोग मिलता है। ठीक इसके विपरीत अशुद्ध जल से व्यक्ति बीमार रहने लगता है और इससे उसकी कार्यक्षमता कम हो जाती है। किसी परिवार में अस्वस्थ व्यक्ति के कारण सारी व्यवस्था गड़बड़ा जाती है। आर्थिक क्षीणता तो आ ही जाती है, परिवार का विकास बाधित हो जाता है। पशुओं के साथ भी यही बात है। शुद्ध पेयजल के अभाव में पशुओं की कार्यक्षमता कम हो जाती है और कुछ पशुओं की मृत्यु भी हो जाती है। इसका

नदियों को प्रदूषित करते औद्योगिक अपशिष्ट।

सीधा असर कृषि-उत्पादन पर पड़ता है। जलजनित रोगों से तरह-तरह की बीमारियां होती हैं और कई बार महामारी तक फैल जाती है, जिससे सैकड़ों लोग काल के गाल में समा जाते हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों की स्थिति तो और भी दयनीय है। पांच में से सिर्फ दो ग्रामीण को ही शुद्ध पेयजल मिल पाता है, जबकि विश्व की सभी प्रकार की बीमारियों का 80 प्रतिशत कारण पेयजल की अशुद्धता है। सिर्फ पेट से संबंधित 70 प्रतिशत बीमारियां प्रदूषित जल के प्रयोग के कारण होती हैं। भारत सरकार ने सन् 1974 में ही ''जल प्रदूषण नियंत्रण तथा रोकथाम अधिनियम'' लागू किया। मगर इससे भी जल का प्रदूषण नहीं रूक सका।

पेयजल की शुद्धता के लिये व्यक्तिगत सावधानी आवश्यक है। उपलब्ध पेयजल को विभिन्न विधियों से शुद्ध किया जा सकता है। हानिकारक जीवाणुओं से मुक्ति के लिये जल में क्लोरीन मिलायी जाती है। जीवाणुओं से बचने का एक बड़ा कारगर उपाय जल को उबाल और छान कर प्रयोग में लाना है।

स्वादिष्ट जल के लिये जल को न तो अत्यधिक कठोर होना चाहिये और न अधिक मीठा (मृदु) ही। दोनों ही स्थितियों में जल का स्वाद बिगड़ जाता है। क्षारीय या अम्लीय जल भी पीने के काम में नहीं आता। उदासीन जल ही पेय योग्य होता है। अर्थात् पेयजल में क्षार और अम्ल की मात्रा बराबर-बराबर मिली होनी चाहिये। पेयजल रंगहीन और गंधहीन भी होना चाहिये। प्रदूषणमुक्त पेयजल की उपलब्धता सुनिश्चित करना अत्यावश्यक है। अशुद्ध जल पीकर बीमार रहने का किसी को अधिकार नहीं है। थोड़ी परेशानी भले झेलनी पड़े, लेकिन अशुद्ध जल पीकर बीमार नहीं होना चाहिये।

जो शुद्ध जल पीता है, वह अधिक दिनों तक जीता है।

अशुद्ध जल नहीं पीना है, स्वस्थ रह कर हमें जीना है।।

संपर्क करें:
अंकुश्री
प्रेस कॉलोनी, सिदरौल,
नामकुम, रांची (झारखण्ड) 834010
मो.न.: 8809972549,
ईमेल: ankushreehindiwriter@gmail.com